ISSN: 2231-5063 IMPACT FACTOR : 4.6052 (UIF) VOLUME - 6 | ISSUE - 11 | MAY - 2017

GRT

GOLDEN RESEARCH THOUGHTS

डॉ तुलसीराम और ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथाओं का तुलनात्मक अध्ययन : सामाजिक परिपेक्ष्य

शिवानी, हरदीप कौर समरा

रिसर्च , हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी फगवाड़ा .

प्रस्तावना

समाज मनुष्यों का एक समूह है। कई समूहों का एक वृहत् समुदाय है। यह मनुष्यों के आपसी सम्बन्धों का पुंज है। अनेक मनुष्यों की जीवनावधि से सम्बन्धित होने के कारण उनके आपसी जटिल सम्बन्धों के इस पुंज को समाज की संज्ञा दी जा सकती है। समाज शब्द सम् उपसर्ग पूर्वक अज गतिक्षेपणयों धातु से धम् प्रत्यय करने पर समाज शब्द निष्पत्र होता है। समाज शब्द का अर्थ वृहद् हिन्दी कोष के अनुसार इस प्रकार है- मिलना तथा एकत्र होना। एक स्थान पर मिलकर रहने वाले लोगों के समूह को समाज कहा जाता है। समाज को यथार्थ रुप को साहित्य के माध्याम से प्रस्तुत किया जाता है। समाज शब्द का प्रयोग व्यायक रुप में किया जाता है। दो या दो से अधिक व्यक्तियों के समूह को समाज कहा जाता हैं मानव का व्यक्तित्व जन्म से ही पूर्ण नहीं होता है, क्योंकि मानव जब शिशु के रुप में जन्म लेता है तब वह मात्र रुधिर, हड्डी, माँस का लोथड़ा होता है। इस नवजात शिशु के पास न तो भाषा होती है, न समझ, न ही उसमें विचार शक्ति होती है और न ही कोई नियम तथा संस्कृति। जन्म के समय बच्चा एक जैविकीय प्राणी के रुप में होता है। धीरे- धीरे इसका समाज और संस्कृति के मध्य पलते हुए समाजीकरण होता है। मानव जाति का इतिहास विकास, उत्थान एवं प्रगति का रहा है, पतन या अवनयन का नहीं। समाज के बारे में अनेक विद्वानों ने इस प्रकार परिभाषा दी है।

श्रीमति सुरजीत कौर के अनुसार, "व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों के रूप को जब यह सम्बन्ध संस्थात्मक रूप में धारण कर लेते हैं, उसे समाज कहा जाता हैं"[1] परिवार एक ऐसी सामाजिक इकाई है जिसमें कुछ मनुष्य मिलकर रहते है। समाजीकरण का परिवार से होता है। परिवार का वातावरण, संस्कृति, सदस्यों का आचरण शिक्षा स्तर, आर्थिक स्तर, प्ररिवारिक संरक्षण, सहयोग, पालन-पोषण आदि का बालको के सामाजिक विकास पर प्रभाव पड़ता है। बालक अपने माता-पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों के जैसा आचरण तथा व्यवहार करने का प्रयास करता है।परिवार में रहकर मनुष्य को कई मुसीबतों का सामना करना पड़ता है । इसी तरह डॉ तुलसीराम और ओपप्रकाश वाल्मीकि ने अपने जीवन में कई मुसीबतों का सामना करना पड़ा।उनका संघर्ष घर से ही शुरु हो गया था।परिवार की अनेक विद्ववानो ने अनेक प्रकार से परिभाषाएं की है।

रेमन्ट के अनुसार- "घर ही वह स्थान है जहाँ वे महान् गुण उत्पन्न होते हैं जिनकी सामान्य विशेषता सहानुभूति है।घर में घनिष्ठ प्रेम की भावनाओं का विकास होता है।यहीं बालक, उदारता- अनुदारता, निस्वार्थ और स्वार्थ,न्याय और अन्याय, सत्य और असत्य, परिस्रम और आलस्य में अन्तर सीखता है"[2] परिवार में रहकर व्यक्ति सब कुछ सीखता हैं।इसी तरह डॉ तुलसीराम ने अपनी आत्मकथा मुर्दहिया में लिखते हैं कि किन्न- किन्न परिस्थितियों से गुजरकर उनका

जीवन व्यतीत हुआ है।नफरत का कारण था चेचक का रोग जिसके कारण उनकी एक आँख की रोशनी चली गई थी। जिसके कारण घर के लोग उन्हें चिढ़ाते थे।बचपन में ही डॉ.तुलसीराम को चेचक का रोग हो गया था, जिसके कारण मुँह में गहरे गहरे दाग पड़ गये थे,जिसने इनको अपशकुनी बना दिया था।तुलसीराम को बाहर के लोग कम अपशकुनी मानते थे,और जब घर वाले लोग ही अपशकुनी मानने लगे तो वह किनका-किनका विरोध करते।

"हमारा संयुक्त परिवार बहुत बड़ा था,किन्तु घर में एक भी रजाई या कम्बल नहीं था।वैसे भी घर में कपडों की कमी हमेशा रहती थी।मेरे पिता जी पूरी धोती कभी नहीं पहनते।वे एक ही धोती के दो टुकडे करके बारी-बारी से पहनते।ओढ़ने का कोई इंतजाम न होने से गांव के लगभग सारे दलित रात भर ठिठुरते"[3]

तुलसीराम लिखते है कि वह एक गरीब परिवार में रहते थे।उनका संयुक्त परिवार था, परिवार के सारे लोग काम करते थे।उसके बावजूद भी गरीबी हमेशा रहती थी। सर्दियों के दिनो में कपड़े तक नहीं होते होते थे।सारी सर्दी ठंड में सोते थे ना ऊपर लेने के लिए कोई कपड़ा नही होता था, ना चारपाई होती थी। सारी रात नीचे सोते थे।सारी जिन्दगी गरीबी में रहना पड़ता था।बरसात के दिनों में यहीं हाल होता था, सारे लोगों को एक जगह पर रहते थे और खाने को कुछ नसीब नहीं होता। जब किसी के पास मांगने जाते तो लोगों से तरह- तरह ताने सुनने को मिलते थे।सारी जिन्दगी भुखमरी के साथ- साथ कपडों की भी हमेशा कमी रहती थी।

"उन दिनों मैं नौवीं कक्षा में था। घर की आर्थिक हालत कमजोर हो चुकी थी।एक -एक पैसे के लिए परिवार के प्रत्येक सदस्य को खटना पड़ता था। मेरे पास पाठय-पुस्तकें हमेशा कम रहती थीं। कपडों की भी वहीं स्थिति थी, जो मिल गया, पहन लिया।जो वक्त पर मिल गया, खा लिया" [4]

ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने अपनी आत्मकथा जूठन में लिखा है कि दलित लोगों को समाज में किस नजरिये से देखते थे,उसका अनुमान लगाना भी बहुत मुश्किल होता है।यह अत्याचार आज भी कहीं ना कहीं मौजूद है।लोगों वह परिवार में बच्चों कि मानसिक पीड़ा को प्रस्तुत किया है। किस तरह लोगों द्वारा अपमानित होना पड़ता था,यदि कोई हिम्मत रखता भी था पढ़ने के लिए तो उन्हे लोगों के ताने सुनने को मिलते थे,कि यह चूहडा पढ़ कर क्या करेगा इसी तरह स्कूल में जाकर अध्यापको से कई तरह की बाते सुनने को मिलती थी।

शिक्षा तथा मानव जाति का जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध है।शिक्षा आन्तरिक बृद्वि तथा विकास की न समाप्त होने वाली प्रक्रिया है इसकी अवधि जन्म से मृत्यु तक फैली हुई है।शिक्षा का वास्तविक अर्थ मनुष्य को मानव बनाना तथा जीवन को प्रगतिशील, सांस्कृति एवं सभ्य बनाना है।शिक्षा द्वारा ही मनुष्य अपनी विचार शक्ति तथा तर्क- शक्ति,समस्या समाधान तथा बौद्विकता प्रतिभा तथा रुझान,धनात्मक भावुकता तथा कुशलता और अच्छे मूल्यों तथा रुचियों को विकसित करता है।इसी के द्वारा ही वह मानवीय, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक प्राणी में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य प्रतिदिन तथा हर क्षण कुछ न कुछ सीखता है। इसका समस्त जीवन ही शिक्षा है। शिक्षा एक निरन्तर तथा गतिशील प्रकिया है। इसका सम्बन्ध सदा विकसित होने वाले मानव तथा समाज के साथ है। इसलिए यह अभी विकास करने वाली प्रक्रिया है।

विवेकानन्द जी के अनुसार- "शिक्षा मनुष्य में पहले से मौजूद दैवी पूर्णता का प्रत्यक्षीकरण है। वे आगे कहते हैं, हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो हमारा आचरण बनाये, हमारे मानसिक बल को बढ़ाये, बौद्विकता का विकास करे और जिसके द्वारा मनुष्य आत्म-निर्भर हो जाये।"[5]

उस समय दलितों की ऐसी स्थिति थी। वह अपने बच्चों को पढ़ा-लिखा नहीं सकते थे। उस समय अधिकर बाह्माण लोग ही पढ़े लिखे थे। उनके अधीन दलितों को रहना पड़ता था। दलित लोग अपना पढ़ाई-लिखाई का सारा काम बाह्माण से करते थे। जिसके लिए बाह्माण उन्हें बहुत अपमानित करते थे।

डाँ तुलसीराम जी के अनुसार, "हमारी दलित वस्ती में कोई पढ़ा-लिखा नहीं था। गांव में बाह्मण ही पढ़े-लिखे थे।वे अकसर दलितों की चिट्ठियां पढ़ने में आनाकारी करते तथा पढ़ने के पहले अपमानजक बातें सुनाते। इस व्यवहार से ऊबकर घर

वालों की कृपा दृष्टि सबसे छोटा बालक होने के कारण मेरे ऊपर पड़ी। परिणामस्वरुप पूर्वोक्त शिव मंदिर के पास स्थित प्राइमरी स्कूल में मुझे चिटठी पढ़ने लायक बनाने के उद्देश्य से भेजा जाने लगा"[6]

तुलसीराम को चिट्ठी पढ़ने लायक बनाने के लिए स्कूल भेजा गया। बाह्मण लोग अक्सर बोलते थे स्कूल मत भेजो ज्यादा पढ़ने से व्यक्ति पागल हो जाता है। उसके बावजूद भी तुलसीराम को स्कूल भेजा गया। उस समय जाति भेदभाव था, स्कूल में स्वर्ण जाति के छात्र दलित छात्रों के प्रति घृणा की भावना रखते थे,दलित छात्रो को अलग से बैठाया जाता था, आध्यापक की मौजूदगी में कोई दलित छात्रों को नहीं बुलाता था। न कोई दलित अपने बच्चों को स्कूल पढ़ने के लिए भेज भी देते थे,तो उनको स्वर्ण जाति के बच्चे छुते तक नहीं थे। अध्यायक दलित छात्रों के साथ बहुत दुर्व्यवहार करते थे। उनको अलग बैठते थे।उनको नाम से नहीं उनकी जाति से उन्हें पुकारते थे।

"सरकारी स्कूलों के द्वार अछूतों के लिए खुलने शुरु हो गये थे, लेकिन जनसामान्य की मानसिकता में कोई विशेष बदलाव नहीं आया था। स्कूल में दूसरों से दूर बैठना पड़ता था। अपने बैठने की जगह तक आते आते चटाई छोटी पड़ जाती थी। कभी-कभी तो एकदम पीछे दरवाजे के पीछे बैठना पड़ता था, जहाँ से बोर्ड पर लिखे अक्षर धुँधले दिखते थे"[7]

दलित समाज में ऐसा माहौल था कि जहां स्वर्णो को उच्चता मिलती थी। स्कूल में जहां हेडमास्टर का दलितों के प्रति बुरा व्यवहार था, वहां बच्चों और आध्यापक का कैसा व्यहार होगा। छात्रों को अपने साथियों से तो अपमानजनक बातें सुनने को मिलती ही थी। स्कूल में दलित छात्रों को अलग बैठाया जाता था। दलित छार्तो को इतनी दूर बैठाया था कि उसके लिए चाहें चटाई कम पड़ जाती थी।दलित छात्रो को पूछने पर जबाब नहीं छड़ी मिलती थी, मतलब अध्यापक उनकी पिटाई करते थे। छात्रों को उनके नाम से जाति से पुकारा जाता था। गलती करने पर छात्रों को ऐसी सजा मिलती जैसे उन्होंने बहुत बड़ा गुनाह किया हो।

किसी वस्तु या व्यक्ति के आसपास की वह परिस्थिति या बात जिसका उस वस्तु या व्यक्ति के अस्तित्व जीवन निर्वाह विकास आदि पर प्रभाव पढ़ता है। किसी कलात्मक या साहित्यिक कृति के वे गुण या विशेषताएँ जो दर्शक या पाठक के मन में उस कृति के रचनाकाल, रचना आदि की कल्पना या मनोभाव उत्पन्न करती है। व्यक्ति के चारों ओर कुछ है, वह उसका वातावरण है। इसमें वे सब तत्व सम्मिलित किए जा सकते हैं जो व्यक्ति के जीवन और व्यवहार को प्रभावित करते हैं। डगलस व हॉलैण्ड के मतानुसार, "वातावरण शब्द का प्रयोग उन सब बाह्म शक्तियों, प्रभावों और दशाओं का सामूहिक रुप से वर्णन करने के लिए किया जाता है, जो जीवित प्राणियों के जीवन, स्वभाव व्यवहार, बुद्धि विकास और परिपक्वता पर प्रभाव डालते है"[8]

उस समय चारों ओर ऐसा वातावरण था, कि लोग पूरी तरह अंधविश्वासों में डूबे हुए थे। लोग भूत प्रेतो में विश्वास रखते थे। यदि कोई बीमार हो जाता तो उसे डाक्टर के पास नहीं लेकर जाते बल्कि चेलों के पास लेकर जाते थे। जहां तक की कौआ चोंच मारे तो उसे भी अपशकुनी समझते और चोंच मारने को मुत्य का सकेत मानते थे। यदि लोगों रोते थे तो उनका मानना होता था कि अब मुत्यु नहीं होगी। ऐसे वातावरण में डॉ तुल्सीराम का परिवेश हुआ।

डॉ तुलसीराम जी के अनुसार, "घर में ओझाओं का बोलबाला हो गया। किसी को सिरदर्द होते ही ओझैती- सोखैती शुरु हो जाती थी। ऐसे भुतहे वातावरण मे किसी शिशु का जन्म आजमगढ़ जिले के धरमपुर नामक गांव में 1 जुलाई, 1949 को हुआ हो तो उसकी विरासत कैसी होगी?[9]

लोग अंधविश्वासों में इतने घिरे हुए थे कि उन्हें सही और गलत का अनुमान लगाना मुश्किल था। किसी को भी वह अशुभ समझाने लगते, देवी देवतों को खुश करने के लिए बच्चों कि बलि देते थे। लोग भूत प्रेतों पर और जादू टोनो पर ही विश्वास कर्ते थे, इसी को अपनी श्रद्वा मानते थे।

"इसी जगह गाँव भर के लड़ाई- झगडड़े गोलमेज कांफ्रेंस की शक्ल में चर्चित होते थे। चारों तरफ गन्दगी भरी होती थी। ऐसी दुर्गन्ध कि मिनट भर में साँस घुट जाए। तंग गलियों में घूमते सूअर, नंग- धडंग बच्चे, कुत्ते,रोजमर्रा के झगडड़े-बस, यह था वह वातावरण जिसमें बचपन बीता"[10]

दलित लोगों के वहां मकान थे जहां गावं भर की औरते, बड़ी बूढी, सब खुले में ही शोचालय जाती थी, रात को नहीं मे नही दिन के उजाले में बैठ जाती थी, त्यागी महिलाएं भी यहीं पर आती थी। चारों ओर गंदगी भरी रहती थी। दलित लोगों को हर तरफ से अपमान ही झेलना पड़ता है। जिन्होंने कभी अपमान झेला नहीं उसे इसका क्या एहसास कैसे होगा। साँस लेने पर दम घुटता था, लोग सूअरों को अपने घरों में पालते थे ताकि जब लोग सूअरो की बलि देते थे तो उनके सुअर बिक जाएं। सूअर को कमाई का एक जरिया मानते थे। लोगों पर कोई भी आकर अपना अधिकार जमाने लगता था, लोगों को खेतों में काम करने लिए जबदस्ती लेकर जाते थे, मना करने पर उन्हें पीटते थे। लोग चुपचाप देखते रहते थे, कोई विरोध के लिए खड़ा नही होता था।

संन्दर्भ सूची

1. दलित साहित्य:, सामाजिक संदर्भ, ओमप्रकाश वाल्मीकि न्यायचक्र अंक 6,15
2.मोहनदास नैमिशराय, साहित्य और संस्कृति में दलित अस्मिता और पहचान का सवाल, पृ 104-5
3. तुलसीराम, मुर्दहिया आत्मकथा, पृ34
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि, जूठन आत्मकथा, पृ46
5. जे एस वालिया,शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार, पृ4
6. तुलसीराम , मुर्दहिया, आत्मकथा पृ21
7. ओमप्रकाश वाल्मीकि , जूठन, आत्मकथा पृ 12
8. ओमप्रकाश वाल्मीकि, जूठन, आत्मकथा पृ75
9.रिन्कू कुमार वर्मा, बाल विकास एवं शिक्षा शास्त्र,पृ 29
10. तुलसीराम , मुर्दहिया, आत्मकथा पृ10

शिवानी
रिसर्च , हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी फगवाड़ा .